एल. उषादेवी

बनाम

भारत संघ व अन्य

27 अप्रैल 2007

(जस्टिस एस.बी.सिन्हा एवं जस्टिस मार्कण्डेय काटजू)

केरल (अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति) सामुदायिक प्रमाणपत्र जारी करने का विनियमन अधिनियम, 1996-पदधारी केरल राज्य के निवासी यद्यपि मूल रूप से तमिलनाडु की थी- जाति प्रमाणपत्र के आधार पर नियुक्त कि वह अनुसूचित जनजाति से संबद्घ है-जाति प्रमाणपत्र का रद्दकरण-सेवा समाप्त-पदधारी का मामला कि अधिनियम के तहत केवल केरल राज्य द्वारा जारी प्रमाणपत्रों को रदद किया जा सकता था-अपील में अभिनिर्धारित- नियुक्त केरल राज्य का निवासी होने के नाते अधिनियम के तहत नियुक्त व्यक्ति- चूंकि उच्च न्यायालय ने भारत सरकार को यह विनिश्चित करने के लिए निर्दिशत किया कि क्या नियुक्त कोण्डारेडडी जाति से संबधित है, कोई हस्तक्षेप नहीं किया गया- समिति को निर्देशित किया कि उक्त को शीघ्रता से विनिश्चित करे।

कोण्डारेडडी को राष्ट्रपति आदेश से आन्ध्रप्रदेश, तमिलनाडु व केरला

राज्यों के लिए अनुसूचित जनजाति में अधिसूचित किया गया है।

अपीलार्थी के पूर्वज केरला राज्य में प्रवासित हो गये थे लेकिन मूलरूप से तमिलनाडु राज्य के थे। अपीलार्थी को अनुसूचित जनजाति से संबद्घ होने के जाति प्रमाणपत्र के आधार पर केन्द्र सरकार द्वारा नियंत्रित प्रावधायी निकाय में नियुक्त किया गया था। उसे यह बताने का कारण बताओं नोटिस जारी किया गया कि क्यों न उसका प्रमाणपत्र रदद किया जाना चाहिए। अनुशानात्मक कार्यवाही प्रारम्भ की गई और उसे उसकी सेवाए समाप्त कर दी गई। यद्यपि उच्च न्यायालय की खण्डपीठ ने आदेश को अपास्त कर दिया।

अन्य सिविल अपीलों में अपीलार्थीगण भी समान रूप से केन्द्र सरकार अथवा लोक उपक्रमों में नियुक्त किये गये थे और उनकी सेवाएं भी समाप्त की गई थी लेकिन अधिकरण ने आदेश को अपास्त कर दिया।

अपीलार्थीगण ने तर्क दिया कि केरल (अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति) सामुदायिक प्रमाणपत्र जारी करने का विनियमन अधिनियम, 1996 में केरल राज्य के प्राधिकारीगण द्वारा जारी प्रमाण पत्रों को निरस्त करने के प्रावधान निहित है ना कि तमिलनाडु राज्य के; और यह कि अधिनियम केवल राज्य सरकार के कर्मचारियों के लिए लागू था ना कि भारत सरकार और उसके संस्थानों के कर्मचारियों के लिए।

अपील खारिज करते हुए न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि-

1.1 यह ऐसा मामला नहीं है जहां अपीलार्थीगण केरल (अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति) सामुदायिक प्रमाणपत्र जारी करने का विनियमन अधिनियम, 1996 के दायरे के बाहर थे। अपीलार्थीगण केरल राज्य के निवासी है। यह समझना कठिन है कि उन्होंने तमिलनाडु राज्य के प्राधिकारियों से जाति समुदाय प्रमाणपत्र किस प्रकार प्राप्त किया। (पैरा-14)(921-ई)

1.2 अधिनियम के तहत जांच समिति का अधिकार क्षेत्र व्यापक आयाम का है। जब एक सक्षम वैधानिक प्राधिकारी अपनी अधिकारिकता का प्रयोग करता है तो यह नहीं समझा जा सकता कि क्यों अपीलार्थीगण अपने आपको उक्त अधिकार क्षेत्र का प्रस्तुत नहीं कर सके। (पैरा-15 और 16) (921-ई-एफ)

मैसर्स सीमन्स लिमिटेड बनाम महाराष्ट्र राज्य व अन्य (2006) 13 स्केल 297. संदर्भित किया गया।

1.3 एक समय पर, यह विवाद कि क्या ऐसे मामलों से निपटने का अधिकार क्षेत्र प्रासंगिक हो सकता है, क्योंकि संबधित कर्मचारी केन्द्र सरकार के अधीन पद संभाल रहे थे। न्यायालयों ने शायद केन्द्र सरकार को इसके संबंध में जांच के लिए निर्देशित किया हो। परन्तु एक बार जब राज्य की विधायिका ने अधिनियम बनाया है जो एक स्व-निहित संहिता है, तो न्यायालय के लिए मामले को पुनः केन्द्र सरकार को संर्दभित करना

आवश्यक नहीं होगा। (पैरा-18) (922-डी-ई)

1.4 अपीलार्थी के मामले में उच्च न्यायालय ने भारत सरकार को इस संदेह को हल करने का निर्देश दिया कि क्या अपीलार्थी कोण्डारेडडी जाति से संबधित है, लेकिन यह राज्य सरकार के आदेश को अपास्त करने का कोई आधार नहीं हो सकता था। जैसा कि उच्च न्यायालय ने मामले को नये सिरे से विचार करने के लिए निर्देशित किया, इससे ज्यादा इस संबंध में और कुछ नहीं कहना है। यद्यपि समिति को निर्देशित किया जाता है कि मामले लंबे समय से लंबित है, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए प्रश्न का यथासंभव शीघ्रता से विनिश्चय करे। (पैरा-19, 20 और 21) (922- ई-जी)

कुमारी माधुरी पाटिल व अन्य बनाम अतिरिक्त कमीश्नर ट्राईबल डेवलपमेन्ट व अन्य 1994 (6) एस सी सी 241; महाराष्ट्र राज्य व अन्य बनाम रवि प्रकाश बाबूलाल सिंह परमार व अन्य 2006 (10) स्केल 575; 2007 (1) एससीसी 80 तथा महाराष्ट्र राज्य व अन्य बनाम संजय के निमजे 2007 एससी डब्ल्यू 1575; संदर्भित किये गये।

सिविल अपीलीय अधिकारिकताः सिविल अपील नम्बर 255/2004

केरला उच्च न्यायालय, एर्नाकुलम के ओं.पी. नं. 961/1993 (एम) में अंतिम निर्णय और आदेश दिनांकित 30-1-2001 से।

के साथ

2004 के सी ए नं. 258, 256 व 257

ई.पदमनाभन, पी. एस. नरसिम्हा और निशे राजेन शौंकर (टी.टी.के.दीपक एण्ड कंपनी के लिए) - अपीलार्थी की ओर से।

ए. शरण ए. एस. जी., शिल्पा सिंह, वी.के.वर्मा, अमित ए. तिवाडी़ और बी.वी.बालारामदास - प्रत्यर्थीगण की ओर से।

जी. प्रकाश, बीना प्रकाश, अशोक भान, वरूणा भंडारी गुगनाणी, डी.एस.महरा, पी. परमेश्वरन, डॉ. इन्द्रप्रताप सिहं, रचना गुप्ता, ए.वी. रंगम और रमेश बाबू एम आर - केरला राज्य के लिए।

न्यायालय निर्णय जस्टिस एस.बी.सिन्हा द्वारा प्रदत्त-

1. इन अपीलों में केरल (अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति) सामुदायिक प्रमाणपत्र जारी करने का विनियमन अधिनियम, 1996- के प्रावधानों का निर्वचन और/अनुप्रयोग शामिल है।

2. मामले के तथ्य वर्ष 2004 की सिविल अपील सं. 258 से संज्ञान में आ रहा है।

3. कोण्डारेडडी को राष्ट्रपति आदेश से आन्ध्रप्रदेश, तमिलनाडु व केरला राज्यों के लिए अनुसूचित जनजाति में अधिसूचित किया गया है। अपीलार्थी मूल रूप से तमिलनाडु राज्य के रहने वाली है। उसके पूर्वज स्वीकृत रूप से केरला राज्य में प्रवासित हो गये थे। वह समुन्द्री उत्पाद

निर्यात विकास प्राधिकरण प्रतिवादी सं. 1 जो कि एक केन्द्र सरकार द्वारा नियंत्रित विधायी निकाय है, में गुणवता पर्यवेक्षक के रूप में नियुक्त की गई थी। उसकी नियुक्ति उसके पक्ष में दिये गये जाति प्रमाण पत्र के आधार पर की गई थी। दिनाक 11-12-1980 को या उसके आसपास उसे एक कारण बताओं नोटिस जारी किया गया था कि क्यो नहीं उसके प्रमाण पत्र को रदद कर दिया जाना चाहिए। उसके विरूद्घ अनुशानात्मक कार्यवाही भी प्रारम्भ की गई। उसकी सेवाए समाप्त कर दी गई लेकिन उक्त आदेश को उच्च न्यायालय की खण्डपीठ ने अपास्त कर दिया ।

4. अन्य सिविल अपीलों में भी, अपीलार्थीगण के पक्ष में जारी किये गये प्रमाण पत्रों पर भरोसा करते हुए या उनके आधार पर अपीलार्थीगण ने केन्द्र सरकार अथवा लोक उपक्रमों में नियुक्तियां प्राप्त की। उन्हें कारण बताओं नोटिस जारी किये गये कि क्यो नहीं उनकी नियुक्तियों को रदद किया जाना चाहिए। उनके विरूद्घ भी अनुशानात्मक कार्यवाहियां प्रारंभ की गई। उनकी सेवाएं समाप्त की गई, लेकिन अधिकरण ने उन्हें अपास्त कर दिया।

5. अपीलकर्त्ताओं के विद्यान अधिवक्ता द्वारा हमारे सामने जो प्रश्न उठाये गये है वे हैः

(1)- अधिनियम में केवल केरला राज्य के अधिकारियों द्वारा दिये गये प्रमाण पत्रों को रदद करने का प्रावधान है उन्हें तमिलनाडु राज्य

द्वारा दिये गये प्रमाण पत्रों को रदद करने की कोई अधिकारिकता नहीं है।

(2). यह अधिनियम केवल राज्य सरकार के कर्मचारियों पर लागू होता है ना कि भारत सरकार या उनके संस्थानों के कर्मचारियों पर।

6. यह अधिनियम केरला राज्य में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों को सामुदायिक प्रमाण पत्र जारी करना विनियमित करने और प्रदत्त करने के लिए अधिनियमित किया गया था भारत के संविधान के अनुच्छेद 342 के अनुसार, किसी जनजाति के सदस्य को किसी विशेष राज्य के लिए अनुसुचित जनजाति के रूप में अधिसूचित किया जा सकता है। 'कोण्डा जनजाति' को अन्य बातों के साथ स्वीकृत रूप से केरला राज्य में अनुसूचित जनजाति के रूप में अधिसूचित किया गया है।

7. विभिन्न राज्यों की विधानसभाएं और यह न्यायालय भी ऐसे प्रमाण पत्रों के दुरूपयोग अथवा गलत उपयोग को नोटिस कर रहे थे ऐसा प्रश्न इस न्यायालय में समक्ष विचार हेतु कुमारी माधुरी पाटिल व अन्य बनाम अतिरिक्त कमीश्नर ट्राईबल डेवलपमेन्ट व अन्य (1994) 6 एस सी सी 241 में आया था। जिसमें अन्य बातों के साथ इन प्रश्नो के विनिश्चय हेतु समुचित समितियों के गठन का निर्देश दिया गया था कि क्या प्रमाणपत्र गलत तरीके से प्राप्त किया गया था तथा इसके रददकरण के उद्घेश्य के लिए प्रक्रियाएं निर्धारित की गई थी।

8. इसके बाद विभिन्न राज्यों द्वारा इस संबंध में अधिनियम बनाकर जांच समितियां गठित की गई। ऐसे प्रमाणपत्रों को रदद करने से होने वाले परिणाम भी निर्धारित किये गये थे।

9. ऐसी समितियों की शक्ति के संबंध में हाल ही में महाराष्ट्र राज्य व अन्य बनाम रवि प्रकाश बाबूलाल सिंह परमार व अन्य (2006) 10 स्केल 575; (2007) 1 एससीसी 80 में इस न्यायालय के समक्ष प्रश्न आया जिसमें कुमारी माधुरी पाटिल उपर लिखित- का संदर्भ करते हुए यह अभिनिर्धारित किया गया कि-

> "इसलिए, उक्त निर्णय इस प्रस्ताव के लिए भी एक अधिकार है कि समिति इस प्रश्न में जा सकती है कि जाति प्रमाण पत्र सही तरीके से जारी किया गया है अथवा नहीं। संबधित प्राधिकारियों को भी जाति प्रमाणपत्र जारी करने के लिए दावे की सत्यता या अन्यथा, का पता लगाने में कुछ भूमिका अदा करने के लिए पाया गया।"

10. इसके अलावा इस न्यायालय ने यह देखा है कि यहां वास्तविक राहत प्रदत्त करने के संबंध में काफी निर्णय है। देखें-महाराष्ट्र राज्य व अन्य बनाम संजय के निमजे 2007 एससी डब्ल्यू 1575

11. हालांकि पक्षकारान के विद्वान अधिवक्तागण ने इस संबंध में कुछ निर्णयों का हवाला दिया है, हमें इस स्तर पर उक्त प्रश्न में जाने की

आवश्यकता नहीं है क्योकि इस स्तर पर यह आवश्यक नहीं है।

12. यह अधिनियम अपने आप में एक सम्पूर्ण संहिता है। अधिनियम की धारा 2(ए) में 'सार्वजनिक सेवा में नियुक्ति' को राज्य या केन्द्र सरकार के उपक्रमों के अधीन सेवा या पद के रूप में परिभाषित किया गया है। 'सामुदायिक प्रमाण पत्र' को सक्षम प्राधिकारी द्वारा विहित प्रारूप में जारी किये गये प्रमाण पत्र के रूप में परिभाषित किया गया है, जिसमें जैसा भी मामला हो, जाति अथवा जनजाति जिससे वह संबधित है, यह दर्शाया गया है । अधिनियम की धारा 2 (एल) 'अनुसूचित जातियों' और 'अनुसूचित जनजातियों' को वही अर्थ प्रदान करती है जो उन्हें क्रमशः भारतीय संविधान के अनुच्छेद 366 के खण्ड (24) व (25) में दिया गया है।

13. अधिनियम की धारा 3 (1) सर्वोपरि खण्ड है । धारा 4 उस तरीके का प्रावधान करती है जिसमें सामुदायिक प्रमाण पत्र प्रदान करने के लिए आवेदन करना आवश्यक है। धारा 5 केवल एक सक्षम प्राधिकारी द्वारा प्रमाण पत्र जारी करने का उपबंध करती है। धारा 6 सामुदायिक प्रमाणपत्र के सत्यापन के लिए स्क्रीनिंग कमेटी के गठन का प्रावधान करती है। धारा 8 सामुदायिक प्रमाणपत्रों के सत्यापन के लिए जांच समिति के गठन का निम्नलिखित शर्तों के रूप में प्रावधान करती है।

"8. सामुदायिक प्रमाणपत्रों के सत्यापन के लिए जांच समिति का

गठन-सरकार सामुदायिक प्रमाणपत्रों के सत्यापन के लिए एक जांच समिति का गठन करेगी। अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति या कोई नियुक्ति प्राधिकारी या स्थानीय निकाय या शैक्षणिक संस्थानों के प्रमुखों से संबधित कोई भी व्यक्ति ऐसे रूप में और ऐसी तरीके से जो जांच समिति द्वारा सामुदायिक प्रमाणपत्रों के सत्यापन के लिए निर्धारित की जाए, आवेदन कर सकता है।"

अधिनियम की धारा 11 (1) इस प्रकार से हैः-

"11. झूठे सामुदायिक प्रमाणपत्र को रद्द करना-(1) जहां, इस अधिनियम के प्रारंभ से पहले या के बाद, एक व्यक्ति जो किसी अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति से संबधित नहीं है ने मिथ्या सामुदायिक प्रमाण पत्र प्राप्त किया है इस प्रभाव का की या तो वह या उसके बच्चे ऐसी जाति अथवा जनजाति से संबधित है, जांच समिति या तो स्वप्रेरणा से अथवा लिखित शिकायत पर अथवा किसी व्यक्ति या प्राधिकारी की रिपोर्ट पर अभिलेख मंगा सकती है तथा ऐसे प्रमाण पत्र की सत्यता की जांच कर सकती है ओंर यदि उसकी राय है कि ऐसा प्रमाण पत्र कपटपूर्वक तरीके से प्राप्त किया गया था तो संबधित व्यक्ति को प्रतिनिधित्व करने का समुचित अवसर देने के बाद यदि कोई हो,

आदेश द्वारा ऐसे प्रमाण पत्र को रदद कर दिया जावेगा।"

धारा 30 निम्नलिखित शर्तों में एक संक्रमणकालीन प्रावधान प्रदान करती हैः

"30. संक्रमणकालीन प्रावधान-इस अधिनियम के प्रारंभ से पहले प्रासंगिक नियमों व आदेशों के तहत किसी सक्षम प्राधिकारी द्वारा जारी किया गया एक सामुदायिक प्रमाण पत्र, जब् तक इसे इस अधिनियम के प्रावधानों के तहत रदद नहीं कर दिया जायेगा तब तक वैध होगा और माना जायेगा कि यह इस अधिनियम के प्रावधानों के तहत जारी किया गया है।"

14. इसलिए यह ऐसा मामला नहीं है जहां अपीलार्थीगण अधिनियम के दायरे के बाहर थे। अपीलार्थीगण केरल राज्य के निवासी है। यह समझना कठिन है कि उन्होंने तमिलनाडु राज्य के प्राधिकारियों से जाति समुदाय प्रमाणपत्र किस प्रकार प्राप्त किया।

15. अधिनियम के तहत जांच समिति का अधिकार क्षेत्र व्यापक आयाम का है।

16. जब एक सक्षम वैधानिक प्राधिकारी अपनी अधिकारिकता का प्रयोग करता है तो हम यह समझने में असफल हो जाते है कि अपीलार्थीगण अपने आपको उक्त अधिकार क्षेत्र का क्यों नहीं प्रस्तुत कर सके।

17. मैसर्स सीमन्स लिमिटेड बनाम महाराष्ट्र राज्य व अन्य (2006) 13 स्केल 297 में कथित है-

"उक्त रिट याचिका में प्रतिवादी द्वारा नोटिस जारी करने के पारित आदेश के क्षेत्राधिकार के तथ्य की विद्यमानता का बिन्दु प्रश्नगत था।

हालांकि आम तौर पर एक रिट अदालत कारण बताओं किसी नोटिस पर सवाल उठाने वाली रिट याचिका पर विचार करने में अपने विवेकाधीन क्षेत्राधिकार का प्रयोग नहीं कर सकती है, जब तक कि अन्य बातों के साथ साथ इसका बिना क्षेत्राधिकार के किया जाना प्रतीत हो, जैसा कि इस न्यायालय के कुछ निर्णयों उत्तर प्रदेश राज्य बनाम ब्रहमदत्त शर्मा व अन्य ए आई आर 1987 एस सी 943, विशेष निदेशक व अन्य बनाम मौहम्मद गुलाम गौस व अन्य (2004) 3 एस एस सी 440 तथा भारत संघ व अन्य बनाम कुनिशेटटी सत्यनारायण (2006) 12 स्केल 262 में अभिनिर्धारित किया गया है लेकिन यहां दिये गये प्रश्न को एक अलग दृष्टिकोण से विचारित किया जाना है अर्थात जब एक नोटिस पूर्व ध्यान के साथ जारी किया जाता है तो एक रिट याचिका संधारणीय होगी। ऐसी स्थिति में, भले ही अदालते विधायी प्राधिकारी को मामले को नये सिरे से सुनवाई करने का

निर्देश दे, सामान्यतः ऐसी सुनवाई से कोई सार्थक उद्घेश्य नहीं निकलेगा। (देखें- केआई शेफर्ड व अन्य बनाम भारत संघ व अन्य (1987) 4 एस सी सी 431 ए आई आर 1988 एस सी 686)। इस मामले में यह स्पष्ट है कि प्रतिवादी ने स्पष्ट रूप से अपना मन बना लिया है। उसने अपने जबाबी शपथ पत्र तथा कथित कारण बताओं बयान दोनों में स्पष्ट रूप से ऐसा कहा है।"

18. एक समय पर, यह विवाद कि क्या ऐसे मामलों से निपटने का अधिकार क्षेत्र प्रासंगिक हो सकता है, क्योंकि संबधित कर्मचारी केन्द्र सरकार के अधीन पद संभाल रहे थे। न्यायालयों ने शायद केन्द्र सरकार को इसके संबंध में जांच के लिए निर्देशित किया हो। परन्तु एक बार जब राज्य की विधायिका ने अधिनियम बनाया है जो एक स्व-निहित संहिता है, तो न्यायालय के लिए मामले को पुनः केन्द्र सरकार को संदर्भित करना आवश्यक नहीं होगा।

19. यह सही है कि अपीलार्थी के मामले में केरला उच्च न्यायालय ने आदेश दिनांक 25-7-1989 से भारत सरकार को इस संदेह को हल करने का निर्देश दिया कि क्या अपीलार्थी कोण्डारेडडी जाति से संबधित है, लेकिन हमारी राय में यह राज्य सरकार के आदेश को अपास्त करने का कोई आधार नहीं हो सकता था। हालांकि हम उस पर ध्यान नहीं देना चाहते।

20. चूंकि उच्च न्यायालय ने मामलें को नये सिरे से विचार करने

का निर्देश दिया है इसिलए हमारा इस संबध में और कुछ कहने का इरादा नहीं है।

21. यद्यपि हम इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि मामले लंबे समय से लंबित है, समिति को निर्देश देगें कि प्रश्न का यथासंभव शीघ्रता से विनिश्चय करे।

22. उपर्युक्त कारणों से ये अपीलें गुणता रहित होने से खारिज की जाती है। कोई खर्चा नहीं ।

अपीलें खारिज

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी प्रियंकर सिहाग (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।